लेख

घरेलू हिंसा सुरक्षा कानून: एक विश्लेषण

लॉयर्स कलैक्टिव विमेन राइट्स इनिशियेटिव

घरेलू हिंसा घर के सुरक्षित वातावरण में एक नज़दीकी सदस्य द्वारा की जाने वाली हिंसा का सबसे यातनापूर्ण रूप है। *घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा कानून 2005* के पारित होने से पहले *भारतीय दंड संहिता* की धारा 498ए के तहत घरेलू हिंसा को सम्बोधित किया जाता था। उसके बाद 1986 में धारा 304बी के ज़रिए एक नए अपराध 'दहेज हत्या' की बात की गई। इस आपराधिक कानून ने अपराधियों की सज़ा पर तो ज़ोर दिया परन्तु महिला की सुरक्षा, आश्रय और आर्थिक ज़रूरतों पर कोई ध्यान नहीं दिया। इसके अलावा यह फौज़दारी कानून सिर्फ़ उन महिलाओं की मदद के लिए था जो विवाहित थीं। इसकी मदद से मायके में हिंसा सहने वाली या अन्य हिंसाओं से जूझ रही औरतों के प्रति राज्य के दायित्व को स्थापित नहीं किया जा सकता था। इसके साथ ही कानून में प्रभावशाली राहत की कमी, लम्बी कानूनी प्रक्रिया जैसी कार्यवाहिक कमज़ोरियां भी थीं। कानूनी आदेशों को लागू करना मुश्किल इसलिए था क्योंकि इसकी अवहेलना करने पर कोई सज़ा या जुर्माने का प्रावधान मौजूद नहीं था।

इन सब बातों को देखते हुए *घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा कानून 2005* के तहत घरेलू हिंसा को सुस्पष्ट तौर पर परिभाषित किया गया है। इस कानून की ख़ासियत यह है कि इसमें बचाव और उपचार दोनों पर ध्यान दिया गया है। इसके तहत अपराधी को अपनी गलती सुधारने का अवसर मिलता है और साथ-साथ अदालत के आदेश का उल्लंघन करने पर इसमें सज़ा का भी प्रावधान है। लिहाज़ा इस कानून में नागरिक व फौज़दारी दोनों तरह के प्रतिकारों का समन्वय है।

घरेलू हिंसा कानून की निगरानी व मूल्यांकन

लॉयर्स कलैक्टिव की रिपोर्ट— "स्टेयिंग अलाइव" (2005) में इस कानून के कार्यान्वयन पर रोशनी डाली गई है। *लॉयर्स कलैक्टिव* ने विभिन्न राज्यों के बजट आबंटन, मजिस्ट्रेट के आदेशों, उच्च-न्यायालयों के फ़ैसलों, आधारभूत सुविधाओं तथा कानून के तहत चिन्हित मुख्य पणधारियां के साक्षात्कार के विश्लेषण के ज़रिए इस कानून के कार्यान्वयन की समीक्षा की है। इस रिपोर्ट का उद्देश्य यह समझना है कि मौजूदा व्यवहार तथा कानून द्वारा प्रस्तावित सुझावों के बीच तालमेल कैसे बैठाया जाए। इस रिपोर्ट से यह भी अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि औरतों के लिए कानून द्वारा सुझाए पक्षों में से क्या फायदेमंद है और क्या नहीं। यह रिपोर्ट कानून द्वारा उल्लेख किए गए निम्न व्यवहारों को सुनिश्चित करना चाहती है।

प्रशिक्षण व जागरूकता

इस कानून के तहत जुड़े विभिन्न पणधारी-सुरक्षा अधिकारी, सेवा-प्रदाता, पुलिस, न्यायालय, स्वास्थ्य सेवाएं, आश्रयघर अपने क्षेत्र और ज़िम्मेदारी के बारे में स्पष्ट तौर पर नहीं जानते। अपने कार्यक्षेत्र की समझ न होने के कारण ये घरेलू हिंसा कानून का प्रभावशाली कार्यान्वयन करने में असमर्थ हैं। सर्वेक्षण से यह निकलकर आया है कि सभी पणधारियों के लिए उनके विभाग द्वारा समय-समय पर जेंडर संवेदनशीलता प्रशिक्षण होने चाहिए। इसके साथ ही न्यायिक अफ़सरों को इस कानून की गहन समझ भी होनी चाहिए जिससे वे उचित आदेश और राहत संबंधी निर्णय लेकर प्रताड़ित महिला की मदद कर सकें। सभी पणधारियों का प्रशिक्षण एक साथ होना चाहिए जिससे वे एक दूसरे के

साथ मिल-बैठकर प्रमुख मुद्दों, अच्छे व्यवहारों और कानून के तहत अपनी भूमिका पर बातचीत कर सकें।

सुरक्षा अधिकारी

सुरक्षा अधिकारी का काम महिला व अदालत के बीच समन्वय का है। महिला को रोज़नामचा बनाने, अर्ज़ी दाखिल करने और कानूनी आदेशों को लागू करने में मदद मिलनी चाहिए। कुछ राज्यों में सुरक्षा अधिकारी पुलिस थानों में तैनात होते हैं जहां उन पर दबाव डाला जा सकता है। वे अपनी भूमिका और लक्ष्य के बारे में भी पूरी तरह से नहीं जानते। इस बात का रोज़नामचा, अर्ज़ी और नोटिस आदि को देखकर अंदाज़ा लगाया जा सकता है।

आधारभूत सुविधाएं देखें तो सुरक्षा अधिकारियों के पास कर्मचारियों की कमी के कारण काम का बोझ है। अपनी व्यक्तिगत सुरक्षा, खर्चों का भुगतान तथा अन्य पक्षों के साथ समन्वय की भी समस्या है। कर्नाटक व आंध्र प्रदेश सरकार ने सुरक्षा अधिकारियों की मदद के लिए सहयोगी स्टाफ़ नियुक्त किया है। आंध्र प्रदेश में एक एक्सटेंशन अधिकारी, डेटा एन्ट्री ऑपरेटर, दो परामर्शदाता, एक समाज सेविका व वकील तथा संदेशवाहक नियुक्त किए गए हैं। कर्नाटक में हर सुरक्षा अधिकारी के साथ एक संदेशवाहक तथा हफ्ते में दो बार सलाह के लिए दो वकीलों की नियुक्ति की गई है।

पिछले कुछ महीनों में पता चला है कि सभी राज्यों में सुरक्षा अधिकारियों की नियुक्ति कर दी गई है। बिहार में 2011 में स्वायत्त सुरक्षा अधिकारियों की नियुक्ति की गई थी। इसी तरह कर्नाटक में 23 स्वायत्त सुरक्षा अधिकारियों को विभागीय पदोन्नति और 24 की नई नियुक्ति की गई है। केरल में 30 परख-अवधि अधिकारियों को सुरक्षा अधिकारी का पद दिया गया है। हालांकि 2011 से किसी भी परख-अवधि अफ़सर को सुरक्षा अधिकारी का काम नहीं सौंपा जा रहा है बल्कि 14 स्वायत्त पदों पर नियुक्तियां की गई हैं। ये सुरक्षा अधिकारी ज़िला परख-अवधि अफ़सरों के सहयोग से काम कर रहे हैं।

सेवा-प्रदाता

सेवा-प्रदाता मुख्यतः गैर सरकारी संगठन हिंसा से जूझने वाली महिलाओं को सहयोग प्रदान करते हैं। वे महिलाओं को स्वास्थ्य, आश्रयघर सेवाएं पाने में मदद करने के साथ-साथ मजिस्ट्रेट के पास शिकायत दर्ज़ कराने में भी सहयोगी रहती हैं।

महिला सुरक्षा अधिकारी व पुलिस के बीच तालमेल व सेवा-प्रदाताओं के औपचारिक सहयोग की कमी के कारण प्रताड़ित महिला को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। 2011 में यह देखा गया है कि सिर्फ़ कर्नाटक राज्य में सेवा-प्रदाताओं ने सुरक्षा अधिकारियों को सहयोग प्रदान किया। उन्होंने अदालत से आदेश निकलवाकर उन्होंने सुरक्षा अधिकारियों तक पहुंचाने में अहम भूमिका अदा की। मध्य प्रदेश व आंध्र प्रदेश में भी सेवा-प्रदाता सम्मन बांटने और महिलाओं के घर जाकर बातचीत करने में सहयोग कर रहे हैं।

2011 में गुजरात सरकार ने हर सेवा-प्रदाता को दो कानूनी परामर्शदाता की सेवाएं मुहय्या कराईं और 236 सेवा-प्रदाताओं को ज़िला व तालुका स्तर पर नियुक्त किया। पर ये सेवा-प्रदाता अनेक ज़िम्मेदारी निभाने वाले सरकारी केंद्र हैं जिन्हें सरकारी अनुदान मिलता है। केरल में आधारभूत सुविधाओं को बेहतर बनाने के लिए सेवा-प्रदाताओं को वकील व कानूनी सलाहकारों की नियुक्ति के लिए 5000/- माहवार का अनुदान दिया गया। हिंसा पीड़ितों को स्वास्थ्य व मनोवैज्ञानिक सेवाएं प्रदान करने के लिए हर सेंटर को 10,000/- का अनुदान भी दिया गया है। केरल राज्य समाज कल्याण बोर्ड को 27,98,928 रुपयों का अनुदान सभी खर्चों के लिए आबंटित किया गया है।

पुलिस

घरेलू हिंसा झेलने वाली महिला सबसे पहले पुलिस के पास जाती है। परन्तु अनेक प्रशिक्षणों व जागरूकता अगुवाइयों के बावजूद पुलिस मामले को समझा-बुझाकर खत्म करने का प्रयास करती है। पुलिस कानूनी कार्यवाही या महिला

को वैकल्पिक कानूनी प्रतिकारों के बारे में नहीं बताती। पुलिस सुरक्षा अधिकारियों और सेवा-प्रदाताओं के साथ आदेशों को लागू करने व उनके उल्लंघन पर कार्यवाही करने में भी हिचकिचाती है। पुलिस के पास हमेशा यह बहाना होता है कि अदालत के आदेश के बिना वह कोई कार्यवाही नहीं कर सकती। पर कई बार ऐसे मामले भी सामने आए हैं जहां अदालती कार्यवाही के बिना ही पुलिस ने महिलाओं की मदद की है। पश्चिम बंगाल में एक ऐसा ही उदाहरण है- वहां सुरक्षा अधिकारी अपने कार्यक्षेत्र के बाहर नोटिस जारी करने के काम में पुलिस स्टेशनों में रेडियोग्राम की मदद ले रहे हैं।

न्यायपालिका

इस कानून की व्याख्या करके महिला को राहत दिलवाने की ज़िम्मेदारी को सच्चाई बनाने में न्यायालय की भूमिका अहम है। हालांकि शुरूआती वर्षों में इस कानून के मायने समझने में कुछ दिक्कत हुई परन्तु 2011 के आदेशों का विश्लेषण करने पर सामने आया है कि सामाजिक ज़रूरतों को ध्यान में रखते हुए न्यायालयों ने *घरेलू हिंसा कानून* के तहत दर्ज परिभाषाओं के दायरे को और अधिक व्यापक बनाया है। अदालतों ने हिंसा बंद करने और रिहाइशी आदेशों को भी बड़ी संख्या में पारित किया है।

अदालत ने घरेलू हिंसा के प्रत्यक्ष प्रमाणों के आधार पर ही सुरक्षा आदेश जारी किए हैं जिससे महिलाएं सशक्त महसूस कर रही हैं। इन राहतों ने महिलाओं को हिंसा मुक्त रिश्तों में रहने की जगह बनाने का हौसला दिया है। उन्हें आर्थिक राहत भी मिली है। अदालत ने अत्यधिक भावनात्मक व शारीरिक यातना के मामलों में मुआवज़े का भी प्रावधान बनाया है। अंतरिम व पूर्ण गुज़ारा भत्ता पाने के आदेश भी पारित किए गए हैं। इसके बावजूद भी कानून के तहत साठ दिन में राहत पाने के प्रावधान को पूरी तरह लागू नहीं किया जा सका है जिसके कारण अनावश्यक देर और समस्याएं पैदा होती हैं।

घरेलू हिंसा कानून के तहत अदालत में सुरक्षा अधिकारी द्वारा दाखिल होने वाले रोज़नामचे को एक निर्णायक दर्जा हासिल नहीं है। *लॉयर्स कलैक्टिव* के सर्वेक्षण से यह निष्कर्ष निकाला गया है कि अगर अदालत रोज़नामचे को दाखिल करने की प्रक्रिया का एक निश्चित तरीका स्थापित कर सके तो महिला सुरक्षा अधिकारी की मदद से अदालत तक पहुंच सकेगी। समूह का यह भी मानना है कि धारा 498ए और *घरेलू हिंसा कानून* का इस्तेमाल एक साथ किया जाना चाहिए क्योंकि दोनों अलग-अलग परन्तु सम्पूरक भूमिका निभाते हैं। इन प्रावधानों व सुझावों को लागू करने के लिए न्यायिक अधिकारियों का गहन प्रशिक्षण किया जाना चाहिए जिससे वे उपयुक्त आदेश जारी करके प्रताड़ित महिला को राहत मुहय्या करा सकें।

कानून संबंधी जानकारी और स्पष्टता का अभाव

2011 सर्वेक्षण की सबसे चौंकाने वाली खोज है *घरेलू हिंसा कानून* पर स्पष्टता और कार्यान्वयन संबंधी जानकारी का अभाव। इसका अच्छा उदाहरण है इस कानून के तहत रिहाइश का अधिकार तथा सम्पत्ति पर अधिकार की व्याख्या के बीच अंतर। यह गलतफ़हमी कि इस कानून के तहत औरतें तलाक़ व सम्पत्ति का बंटवारा जैसी राहतें भी पा सकती हैं पर स्पष्टता और समझ बनाना ज़रूरी है क्योंकि इससे घरेलू हिंसा झेलने वाली महिलाओं के प्रतिकार पर प्रभाव पड़ सकता है।

सर्वेक्षण से यह भी सामने आया है कि कुछ सुरक्षा अधिकारी यह समझते हैं कि घरेलू निरीक्षण रिपोर्ट और रोज़नामचा एक ही चीज़ है। यही गलतफ़हमी महाराष्ट्र में भी थी। अदालत को भी दोनों के बीच अंतर को स्पष्ट तौर पर समझना होगा क्योंकि रोज़नामचा रिपोर्ट में घरेलू निरीक्षण की आवश्यकता नहीं होती। घरेलू निरीक्षण की ज़रूरत रिहाइशी आदेश से जुड़े मुद्दों पर स्पष्टता के समय पड़ती है।

स्वास्थ्य व आश्रयघर सुविधाएं

कानून के तहत घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं को स्वास्थ्य व आश्रय सुविधाएं मिलनी चाहिए परन्तु ये सेवाएं मौजूद नहीं हैं। सबसे पहली बात यह है कि इन संस्थानों को अपनी ज़िम्मेदारियों व भूमिका को कोई समझ नहीं है। घरेलू हिंसा से प्रताड़ित महिला को सबसे पहले चोट का जायज़ा लेने के लिए स्वास्थ्य परीक्षण कराना होता है पर स्वास्थ्य अधिकारी व संस्थान इस कानून के कार्यान्वयन में

कोई मदद नहीं करते। सरकार व *लॉयर्स कलैक्टिव* द्वारा आयोजित प्रशिक्षणों में भी ये अधिकारी व संस्थान हिस्सा नहीं लेते। आश्रयघरों के पास भी अनुदान व प्रशिक्षण की कमी होती है। *कानूनी सलाह अथॉरिटी* भी इस कानून को लागू करने में मददगार नहीं रही है जबकि *कानूनी सुविधा अथॉरिटी कानून (1987)* के तहत महिलाएं मुफ़्त कानूनी मदद पाने की हक़दार हैं।

संस्थागत आंकड़ों का अभाव

किसी भी कानून की निगरानी व कार्यान्वयन एकत्रित आंकड़ों पर आधारित होता है और इसकी कमी एक समस्या हो सकती है। इस कानून के तहत स्वास्थ्य केन्द्रों से आंकड़े एकत्रित करने के लिए ज़िम्मेदार विभाग ने अपना काम नहीं किया है। वे सभी पणधारियों को उनकी भूमिका बताने और उनके आपसी तालमेल के लिए भी नोटिस जारी करने के लिए ज़िम्मेदार हैं पर वे इन सभी दायित्वों को निभाने मे चूक गए हैं। निगरानी व मूल्यांकन रिपोर्ट ने एक समान रिपोर्टिंग तंत्र, जिसकी मदद से सभी पणधारियों से आंकड़े एकत्रित किए जा सकें की ज़रूरत पर ज़ोर दिया है।

बजट

घरेलू हिंसा कानून 2006 में लागू हुआ पर केंद्रीय सरकार ने इसके कार्यान्वयन के लिए कोई बजट आबंटित नहीं किया था। पर राज्यों ने अपने बजट में से प्रशिक्षण, कौशल निर्माण, जागरूकता, जानकारी, शिक्षा व सम्प्रेषण जैसे महत्वपूर्ण घटकों के लिए आबंटन किया है। 33 राज्यों में से 13 राज्यों ने इस कानून को लागू करने के लिए योजना बनाई है। मेघालय ने 2 करोड़ व कर्नाटक ने 5 करोड़ की राशि इस कानून के कार्यान्वयन के लिए नियत की है। परन्तु बिहार, झारखंड, राजस्थान, पश्चिमी बंगाल ने कोई संसाधन आबंटित नहीं किए हैं जबकि इन राज्यों में घरेलू हिंसा के आंकड़ों की दर काफी ऊंची हैं।

हमारी रिपोर्ट के अनुसार केरल व बिहार ने हाल ही में कुछ हस्तक्षेप किये हैं। पर सेवा-प्रदाताओं के लिए सहयोग की कमी सभी जगह देखी गई है। केवल मध्य प्रदेश ने आश्रयघरों के लिए कुछ अनुदान निश्चित किया है। इस कानून को लागू करने के लिए कुल बजट 1522 करोड़ रुपये होगा जिसमें ज़रूरी सेवाएं व आधारभूत सुविधाएं भी शामिल होंगी।

सारांश में यह कहा जा सकता है कि इस कानून को सामाजिक परिवर्तन का दस्तावेज़ बनाने के लिए उन मानकों का विशेष रूप से उल्लेख करना होगा जो कानूनी तौर पर अवैध हैं और जिसके लिए कानूनी राहत और आदेश पारित किए जा सकते हैं। पर इस बहुमुखी, सशक्त कानून का बखूबी उपयोग विभिन्न पणधारियों के बीच समन्वय पर निर्भर है। इस कानून का प्रभावशाली कार्यान्वयन दुनिया के सबसे बड़े प्रजातंत्र में महिला सशक्तिकरण को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

लॉयर्स कलैक्टिव *कानून व महिला अधिकारों पर कार्यरत संस्था है।*

चमक के अलावा

अनामिका

आपने कभी
रोकर उठी औरत की आंखें देखी हैं?
विद्यापति सूर के विरह-गीतों से उठकर
कोर्ट-कचहरी के फ़ारम पर
चस्पां होती
औरत की आंखें?
रोती हुई नहीं-
रोकर उठी आंखों में
कुछ एक होता है-
पता नहीं क्या-
बारिश में धुले हुए
नारियल के बच्चा-पत्तों जैसा हिलता?

तमिलनाडु में क्यों है कन्याकुमारी?
कोई चीज़ खास किसी एक जगह
क्यों होती है आखिर?
क्यों होती है औरत
जैसी वह होती है,
क्यों होती हैं उसकी आंखें
जैसी वे होती हैं-
तकलीफ़ की थोड़ी चमक
और हल्की थर्राहट के बीच!

अनामिका *हिन्दी साहित्य जगत की वरिष्ठ कवयित्री व लेखिका हैं।*